अध्याय

6

स्थापत्य एवं शिल्प के विविध आयाम

मानव संस्कृति के इतिहास में स्थापत्य का अपना अलग स्थान है। स्थापत्य एक ऐसी शृंखला है जो सदियों की बिखरी हुई कड़ियों को जोड़कर देश और समाज की वास्तविक सांस्कृतिक तस्वीर को प्रस्तुत करती है। प्राक् व आद्य इतिहास की संस्कृतियों के ज्ञान हेतु स्थापत्य की भूमिका अतुलनीय है। किसी भी देश की प्रगति का समुचित अध्ययन बिना स्थापत्य की विविध परतों तथा खण्डहरों के अध्ययन के नहीं हो सकता।

यदि हम राजस्थान की बात करें, तो राजस्थान की विशेष भौगोलिक स्थिति ने यहाँ के स्थापत्य को प्रभावित किया है। नगर, महल, परकोटे, किले या जलाशयों के निर्माण में उपयोगिता के साथ मजबूती का पूरा ध्यान रखा गया है।

नगर–विन्यास (स्थापत्य) एवं भवन शिल्प

हनुमानगढ़ जिले में कालीबंगा और सौंथी में खुदाई से ऐसे अनेक प्रमाण मिले हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि ऋग्वैदिक काल से कई सदियों पूर्व सरस्वती एवं दृषद्वती नदियों के किनारों पर बसे इन नगरों की नगर योजना एवं भवन निर्माण उच्च स्तरीय था। ईटों से बने भवन, सड़कें, नालियां, गोल कुएं, वेदियां आदि इस बात को प्रमाणित करती हैं।

दक्षिणी–पश्चिमी राजस्थान में आहड़, गिलूण्ड आदि संस्कृति के केन्द्र रहे। मकानों में खिड़कियां, दरवाजे, बरामदे, खुले चौक आवास को पूर्णता प्रदान करते थे, जो यहाँ की समृद्ध अवस्था पर प्रकाश डालते हैं। अनाज पीसने के पत्थर, तांबे की चद्दरें आदि आहड़ की कृषि तथा व्यवसाय प्रधान बस्ती की ओर संकेत करते हैं। पौराणिक सभ्यता के युग में राजस्थान के कई सांस्कृतिक केन्द्रों का ज्ञान होता है जिनमें पुष्कर, मरुधन्व, जांगल, मत्स्य, साल्व, मरुकांतार आदि प्रमुख हैं।

महाभारत काल में विराट नगर (बैराठ), पुष्कर आदि नगरों का वर्णन आता है, जो स्थापत्य एवं रक्षा की दृष्टि से नगर योजना की समृद्ध कहानी कहते हैं। मौर्य–काल से लेकर उत्तर गुप्तकाल में भारतीय स्थापत्य की भांति राजस्थान में भी स्थापत्य के एक विशेष रूप का विकास हुआ। इस काल की कला केवल राजकीय प्रश्रय में ही नहीं पलती थी, वरन् आमजन के मध्य भी प्रचलित थी। विराट नगर (जयपुर) अशोक कालीन सभ्यता का एक अच्छा उदाहरण है। यहाँ के भग्नावशेषों में स्तम्भ लेख और बौद्ध विहार के खण्डहर प्रमुख हैं। मौर्य काल में बेड़च नदी के किनारे मध्यमिका (चित्तौड़ के पास जिसे आजकल नगरी कहते हैं) की भव्य नगर योजना इस बात की साक्षी है कि तीसरी सदी ईसा पूर्व से छठी सदी तक यह भव्य नगर रहा।

गुप्त और गुप्तोत्तर काल में मेनाल, अमझेरा, डबोक तथा भरतपुर के आस–पास का क्षेत्र नगरीय वैभव के साक्षी हैं। बावड़ियां, कुण्ड, मंदिर, सड़कें, नालियां तथा रिहायशी मकानों का संतुलित निर्माण इन खण्डहरों तथा उपलब्ध पुरातात्त्विक सामग्री में आसानी से दिखाई पड़ता है।

सातवीं से तेरहवीं शती तक का काल राजस्थान में स्थापत्य की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण रहा है। राजपूत संस्कृति के उदय के कारण वीरता एवं रक्षा के प्रतीक किले एवं धार्मिक प्रवृत्ति के प्रतीक मंदिर

बनाये गये।

राजपूत काल में जहाँ–जहाँ राजधानियां बनीं वहाँ का नगर नियोजन विशिष्ट रहा। नगर की रक्षा एवं सुविधा की दृष्टि से जो स्थान चुना जाता था वह महत्त्वपूर्ण स्थल होता था। इसी दृष्टि से भीनमाल, चित्तौड़, मण्डोर, ओसियां, रणथम्भौर, झालरापाटन, राजौरगढ़, आमेर जैसे स्थानों को राजधानी नगर बनाने हेतु चुना गया। आगे चलकर देशी राजाओं ने अपनी–अपनी राजधानियों के लिए जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, उदयपुर, बूंदी, कोटा, जयपुर जैसे नगरों की स्थापना की और उन्हें परिपूर्ण नगर के रूप में विकसित किया।

उदाहरण के लिए यदि हम जयपुर को देखें, तो महान शिल्पकार विद्याधर ने जयपुर शहर को नौ वर्गों के सिद्धांत पर बसाया था। सुव्यवस्थित रूप से बसे जयपुर के निर्माण में चौड़ी और सीधी सड़कों एवं रास्तों की व्यवस्था सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रही। शहर के दोनों सिरों पर दो चौपड़ अर्थात् छोटी और बड़ी चौपड़ हैं, जिनमें बीच में फव्वारें तथा चौड़ी सड़क के दोनों ओर बाजार हैं। शहर से निकास के लिए सूरजपोल, चांदपोल, घाटगेट, सांगानेरी गेट, अजमेरी गेट, जोरावरसिंह गेट आदि महत्त्वपूर्ण दरवाजे हैं।

सवाई जयसिंह की कल्पना को साकार करने के लिए जयपुर शहर की नींव नवम्बर 1726 ई. में राजगुरु पंडित जगन्नाथ सम्राट द्वारा रखी गयी थी। आगे चलकर तो पूरे राजस्थान के नगर नियोजन को जयपुर के स्थापत्य ने प्रभावित किया।

12वीं सदी में जैसलमेर का निर्माण, जंगल की निकटता और पानी की सुविधा को ध्यान में रखकर किया गया था। समूची योजना जन–जीवन और व्यापार की समृद्धि के हित में थी। चौहानों के समय अजमेर की गिनती समृद्ध नगरों में की जाती थी। पृथ्वीराज विजय काव्य में अजमेर की तुलना इन्द्रपुरी से की गई है।

बूंदी के स्थापत्य में तथा उसके बसाने में जल की प्रचुरता का बड़ा हाथ रहा है। जोधपुर और बीकानेर की बसावट में गढ़ निर्माण, परकोटे–भवन निर्माण आदि भौगोलिक परिस्थितियों से संबंधित हैं। बीकानेर में समतल भूमि में पेशे के अनुसार नगर के भाग बनाये गये तथा हाटों और बाजारों को व्यापारिक सुविधा के अनुकूल बनवाया गया। उदयपुर को झील के किनारे घाटियों के अनुकूल पेशे के अनुसार मोहल्लों में बांटा गया।

नगरों के स्थापत्य से गाँवों का स्थापत्य भिन्न रहा है। पहाड़ी इलाके के गाँव पहाड़ी ढलान और कुछ ऊँचाई लिए हुए हैं, जैसे केलवाड़ा, सराड़ा आदि। पहाड़ों और घने जंगलों में आदिवासियों की बस्तियों, छोटी–छोटी टेकरियों पर दो–चार झौंपड़ियों के रूप में बसी मिलती हैं। रेगिस्तानी गाँवों को पानी की सुविधा को ध्यान में रखकर बसाया जाता है। इसीलिए बीकानेर और जैसलमेर के गाँवों के आगे 'सर' अर्थात् जलाशय का प्रयोग अधिकतर पाया जाता है, जैसे– बीदासर, जेतसर, उदासर।

दुर्ग–शिल्प

राजस्थान का शायद ही कोई जनपद या अंचल ऐसा हो जहाँ कोई छोटा–बड़ा दुर्ग या गढ़–गढ़ी न हो। दुर्ग–निर्माण की परम्परा यहाँ बहुत प्राचीन काल से ही चली आ रही है। शुक्रनीति के अनुसार राज्य के सात अंग माने गये हैं, जिनमें दुर्ग भी एक है। सम्पूर्ण देश में राजस्थान वह प्रदेश है, जहाँ पर महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के बाद सर्वाधिक गढ़ और दुर्ग बने हुए हैं। यहाँ राजाओं व सामन्तों ने अपने निवास, सुरक्षा, सामग्री संग्रहण, आक्रमण के समय अपनी प्रजा को सुरक्षित रखने, पशु–धन बचाने के लिए और संपत्ति को छिपाने के लिए दुर्ग बनवाये।

राजस्थान में दुर्गों के स्थापत्य के विकास का प्रथम उदाहरण कालीबंगा की खुदाई में मिलता है। कालान्तर में मौर्य, गुप्त तथा परवर्ती युग में दुर्गों के निर्माण के निश्चित आधार दिखाई पड़ते हैं। इस समय दुर्ग निर्माण में मंदिरों तथा जलाशयों को प्रधानता दी जाने लगी। राजपूत काल में राजस्थान में बने दुर्गों

में भाटियों का सोनागढ़, अजयराज चौहान का गढ़बीठली तारागढ़ (अजमेर), कुंभा का माण्डलगढ़ आदि उल्लेखनीय हैं।

तराईन के दूसरे युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की पराजय के बाद दिल्ली में तुर्क–अफगान शासन की स्थापना हुई। जिसका प्रभाव राजस्थान के दुर्ग स्थापत्य पर भी पड़ा। 13वीं सदी के बाद दुर्ग बनाने की परम्परा में एक नया परिवर्तन दिखाई देता है। इस काल के दुर्ग निर्माण में सुरक्षा का विशेष ध्यान रखा गया। अब दुर्ग वहाँ बनाये जाने लगे जहाँ ऊँची–ऊँची पहाड़ियां हो तथा जो ऊपर से चौरस हो। यहाँ खेती योग्य भूमि एवं सिंचाई के साधनों का समुचित प्रबंध किया गया। इस समय प्राचीन काल में जो दुर्ग बने हुए थे तथा जो जीर्ण–शीर्ण या खण्ड़हर हो गए थे उनका पुनर्निर्माण भी किया गया, जैसे आबू में अचलगढ़। महाराणा कुंभा ने इसे नवीन दुर्ग में परिवर्तित किया। कुंभा ने चित्तौड़गढ़ दुर्ग का भी आवश्यकतानुसार पुनर्निर्माण करवाया।

जब मुगलों के साथ राजपूताना के शासकों के मधुर संबंध बने तो दुर्ग स्थापत्य में भी परिवर्तन आ गया। अब राजपूत शासक पहाड़ियों से नीचे आकर समतल मैदान में नगर दुर्गों का निर्माण करने लगे, जैसे–जयपुर, बीकानेर, भरतपुर आदि। क्योंकि राजस्थान के राजपूत शासकों के लिए यह स्थिरता व शांति का काल था।

क्या आप जानते हैं?

राजस्थान के 6 प्रमुख दुर्गों– आमेर महल, गागरोण, कुंभलगढ़, जैसलमेर, रणथंभौर और चित्तौड़गढ़ को जून 2013 में नोमपेन्ह में हुई वर्ल्ड हेरिटेज कमेटी की बैठक में यूनेस्को की वर्ल्ड हेरिटेज साइट की सूची में शामिल किया गया।

प्राचीन ग्रंथों में दुर्गों की जिन प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख हुआ है, वे राजस्थान के दुर्गों में प्रायः देखने को मिलती हैं। सुदृढ़ प्राचीर, अभेद्य बुर्जे, किले के चारों तरफ गहरी खाई या परिखा, गुप्त प्रवेश द्वार तथा सुरंग, किले के भीतर सिलहखाना (शस्त्रागार), जलाशय अथवा पानी के टांके, राजप्रासाद तथा सैनिकों के आवास गृह यहाँ के प्रायः सभी दुर्गों में मिलते हैं।

दुर्गों के प्रकार

अपनी स्थिति, स्थापत्य व उपयोगिता के आधार पर दुर्गों को कई प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। दुर्गों के कुछ महत्त्वपूर्ण प्रकार निम्नलिखित हैं–

1. औदुक दुर्ग अर्थात् जल दुर्ग ऐसे दुर्ग को कहते हैं जो विशाल जल राशि से घिरा हुआ हो, जैसे – गागरोण दुर्ग।

2. गिरि (पर्वत) दुर्ग किसी ऊँचे पर्वत पर स्थित होता है। राजस्थान के अधिकांश दुर्ग इसी श्रेणी में आते हैं।

3. मरूभूमि में बना हुआ दुर्ग धान्वन दुर्ग कहलाता है, जैसे– जैसलमेर का दुर्ग।

4. सघन बीहड़ वन में बना हुआ दुर्ग वन दुर्ग कहलाता है, जैसे– सिवाना का दुर्ग।

5. एरण दुर्ग वे दुर्ग हैं जिनके मार्ग खाई, कांटों व पत्थरों से दुर्गम हों, जैसे– चित्तौड़ व जालौर के दुर्ग।

6. पारिख दुर्ग अर्थात् जिसके चारों ओर बहुत बड़ी खाई हो। जैसे– भरतपुर दुर्ग, बीकानेर का जूनागढ़।

7. जिन दुर्गों के चारों ओर बड़ी–बड़ी दीवारों का परकोटा हो वे पारिध दुर्ग कहलाते हैं, जैसे– चित्तौड़, जैसलमेर।

8. सैन्य दुर्ग वह हैं जिसमें युद्ध की व्यूह–रचना में चतुर सैनिक रहते हों।

9. सहाय दुर्ग में शूरवीर एवं सदा अनुकूल रहने वाले बांधव लोग निवास करते हैं।

कुछ दुर्ग ऐसे भी हैं, जिन्हें दो या अधिक दुर्गों के प्रकार में शामिल किया जा सकता है, जैसे चित्तौड़ के दुर्ग को गिरि दुर्ग, पारिख दुर्ग एवं एरण दुर्ग की श्रेणी में रखा जाता है। दुर्गों के सभी प्रकारों में सैन्य दुर्गों को श्रेष्ठ माना जाता है। चित्तौड़ दुर्ग सहित राजस्थान के कई दुर्गों को 'सैन्य दुर्ग' की श्रेणी में रखा जाता है।

राजस्थान के प्रमुख दुर्ग

चित्तौड़गढ़

गिरि दुर्गों में राजस्थान का गौरव चित्तौड़ का किला सबसे प्राचीन और प्रमुख है। दिल्ली से मालवा और गुजरात जाने वाले मार्ग पर स्थित होने के कारण प्राचीन और मध्यकाल में इस किले का विशेष सामरिक महत्त्व था।

चित्तौड़गढ़

मेवाड़ के इतिहासग्रंथ वीरविनोद के अनुसार मौर्य राजा चित्रांग (चित्रांगद) ने यह किला बनवाकर अपने नाम पर इसका नाम चित्रकोट रखा था, उसी का परिवर्तित नाम चित्तौड़ है। मेवाड़ में गुहिल राजवंश के संस्थापक बप्पा रावल ने अंतिम मौर्य शासक (मानमोरी) को पराजित कर आठवीं शताब्दी ई. के लगभग चित्तौड़ पर अधिकार कर लिया। अलाउद्दीन खिलजी ने इस दुर्ग पर अधिकार कर इसका नाम खिज्राबाद रख दिया।

यह दुर्ग एक पठार पर स्थित है जिसे मेसा का पठार कहते हैं। यह किला सब किलों का सिरमौर समझा जाता है। चित्तौड़गढ़ के लिए यह उक्ति प्रचलित है – ''गढ़ तो चित्तौड़गढ़ बाकी सब गढैयां''।

चित्तौड़ के किले में इतिहास के तीन प्रसिद्ध साके हुए। पहला सन् 1303 ई. में अलाउद्दीन खिलजी के समय, दूसरा 1534 ई. में गुजरात के शासक बहादुरशाह के समय व तीसरा 1567 ई. में अकबर के आक्रमण के समय हुआ था। रानी पद्मिनी के जौहर, वीर जयमल राठौड़ और पत्ता सिसोदिया के पराक्रम और बलिदान का साक्षी चित्तौड़ का किला इतिहास में अपना कोई सानी नहीं रखता।

सुदृढ़ और घुमावदार प्राचीर, उन्नत और विशाल बुर्जे, सात अभेद्य प्रवेश द्वार, किले पर पहुँचने का लम्बा और टेढ़ा–मेढ़ा सर्पिल मार्ग आदि सब विशेषताओं ने चित्तौड़गढ़ को एक विकट दुर्ग का रूप दे दिया। यहाँ के भवनों में तुलजामाता का मंदिर, नवलखा भंडार, भामाशाह की हवेली, शृंगार चंवरी प्रासाद, त्रिपोलिया दरवाजा, कुंभश्याम मंदिर, सोमदेव मंदिर, कुम्भा द्वारा निर्मित विजयस्तम्भ, रानी पद्मिनी के महल, गोरा–बादल के महल, चित्रांग मोरी तालाब तथा जैन कीर्ति स्तम्भ उल्लेखनीय हैं।

कुंभलगढ़ (राजसमंद)

महाराणा कुंभा द्वारा दुर्ग–स्थापत्य के प्राचीन भारतीय आदर्शों के अनुरूप बना कुंभलगढ़ गिरि दुर्ग का अच्छा उदाहरण है। मेवाड़ और मारवाड़ की सीमा पर सादड़ी गाँव के समीप स्थित कुंभलगढ़ दुर्ग संकटकाल में मेवाड़ के राजपरिवार का आश्रय स्थल रहा है।

इस दुर्ग का प्रमुख शिल्पी मण्डन था। कुंभलगढ़ दुर्ग 36 किलोमीटर लम्बे परकोटे से घिरा हुआ है जो अन्तर्राष्ट्रीय रिकार्ड में दर्ज है। इसकी सुरक्षा दीवार इतनी चौड़ी है कि एक साथ आठ घुड़सवार चल सकते है। कर्नल टॉड ने कुंभलगढ़ की तुलना सुदृढ़ प्राचीरों, बुर्जों, कँगूरों के विचारों से 'एट्रस्कन वास्तु' से की है।

दुर्ग के भीतर झालीबाव बावड़ी, कुम्भस्वामी विष्णु मंदिर, झालीरानी का मालिया, मामादेव तालाब, उड़ना राजकुमार (पृथ्वीराज राठौड़) की छतरी आदि अन्य प्रसिद्ध स्मारक बने हुए हैं। यहीं उदयसिंह का राज्याभिषेक हुआ एवं राणा प्रताप का जन्म हुआ। इसके ऊपरी छोर पर राणा कुंभा का निवास है, जिसे 'कटारगढ़' कहते हैं। इस किले की ऊँचाई के बारे में अबुल फजल ने लिखा है कि यह इतनी बुलन्दी पर बना हुआ है कि नीचे से ऊपर की ओर देखने पर सिर से पगड़ी गिर जाती है।

रणथम्भौर दुर्ग (सवाईमाधोपुर)

इसका निर्माण आठवीं शताब्दी में अजमेर के चौहान शासकों द्वारा करवाया गया था। एक मान्यता के अनुसार इसका निर्माण रणथान देव चौहान ने करवाया था। रणथम्भौर दुर्ग राणा हम्मीर देव चौहान के साहस का मूक गवाह है, जो सन् 1301 में अलाउद्दीन से युद्ध करते हुए अपने शरणागत धर्म के लिए बलिदान हुआ। इस दुर्ग के स्थापत्य की विलक्षण बात यह है कि इसमें गिरि दुर्ग और वन दुर्ग दोनों की विशेषताएं विद्यमान हैं। रणथम्भौर की सुदृढ़ नैसर्गिक सुरक्षा व्यवस्था से प्रभावित होकर अबुलफजल ने लिखा है कि "यह दुर्ग बख्तरबंद है।" दुर्ग परिसर में हम्मीर महल, रानी महल, हम्मीर की कचहरी, सुपारी महल, 32 खम्भों की छतरी, जोगी महल, पीर सदरूद्दीन की दरगाह, गणेश मंदिर स्थित है।

सिवाणा दुर्ग (बाड़मेर)

बाड़मेर में छप्पन के पहाड़ पर स्थित सिवाणा का दुर्ग इतिहास प्रसिद्ध है। इसे 'अणखलों सिवाणों' दुर्ग भी कहते हैं। इस दुर्ग की स्थापना 954 ई. में परमार वंशीय वीरनारायण ने की थी। अलाउद्दीन खिलजी के काल में यह दुर्ग जालोर के राजा कान्हड़दे के भतीजे शीतलदेव के अधिकार में था। अलाउद्दीन खिलजी ने 1310 ई. के लगभग सिवाणा के किले पर आक्रमण किया, जिसमें वीर शीतलदेव वीरगति को प्राप्त हुये तथा दुर्ग पर खिलजी का अधिकार हो गया।

सिवाणा दुर्ग संकटकाल में मारवाड़ (जोधपुर) के राजाओं की शरणस्थली रहा है। राव मालदेव ने गिरी सुमेल के युद्ध के बाद शेरशाह की सेना द्वारा पीछा किये जाने पर सिवाणा दुर्ग में आश्रय लिया था। चन्द्रसेन ने सिवाणा के दुर्ग को केन्द्र बनाकर मुगलों के विरुद्ध संघर्ष किया था।

तारागढ़ का किला (बूंदी)

गिरि दुर्ग का बेहतरीन उदाहरण बूंदी का तारागढ़ का किला पर्वत की ऊँची चोटी पर स्थित होने के फलस्वरूप धरती से आकाश के तारे के समान दिखलाई पड़ने के कारण तारागढ़ के नाम से प्रसिद्ध है। इस किले का निर्माण चौदहवीं शताब्दी में राव बरसिंह ने मेवाड़, मालवा और गुजरात की ओर से संभावित आक्रमणों से बूंदी की रक्षा करने के लिए करवाया था।

वीर विनोद के अनुसार महाराणा क्षेत्रसिंह (1364–1382 ई.) बूंदी विजय करने के प्रयास में मारे गए थे। उनके पुत्र महाराणा लाखा काफी प्रयत्नों के बावजूद भी बूंदी पर अधिकार न कर सके तो उन्होंने मिट्टी का नकली दुर्ग बनवा उसे ध्वस्त कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। लेकिन नकली दुर्ग की रक्षा के लिए

भी कुम्भा हाड़ा ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी।

तारागढ़ में बने राजमहल स्थापत्य कला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। बूंदी के राजमहलों की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इनके भीतर अनेक दुर्लभ एवं जीवन्त भित्तिचित्रों के रूप में कला का एक अनमोल खजाना विद्यमान है। विशेषकर महाराव उम्मेदसिंह के शासनकाल में निर्मित 'चित्रशाला' बूंदी चित्रशैली का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है। चौरासी खम्भों की छतरी, शिकार बुर्ज, फूल–सागर, नवल सागर सरोवर व गर्भ–गुंजन तोप बूंदी दुर्ग के वैभव को प्रकट करते हैं।

नाहरगढ़ का किला (जयपुर)

जयपुर में अरावली पर्वतमाला की पहाड़ी पर स्थित नाहरगढ़ के किले का निर्माण सवाई जयसिंह ने मराठा आक्रमणों से बचाव के लिए करवाया था। इस किले को 'सुदर्शनगढ़' भी कहते हैं। इसका नाहरगढ़ नाम नाहरसिंह भोमिया के नाम पर पड़ा। ऐसी मान्यता है कि नाहरगढ़ के निर्माण के समय जुझार नाहरसिंह ने किले के निर्माण में विघ्न उपस्थित किया, तब तान्त्रिक रत्नाकार पौण्डरीक ने नाहरसिंह बाबा को अन्यत्र जाने के लिए राजी कर लिया और उनका स्थान 'आम्बागढ़' के निकट एक चौबुर्जी गढ़ी में स्थापित कर दिया, जहाँ वे आज भी लोकदेवता के रूप में पूजे जाते हैं। नाहरगढ़ में सवाई माधोसिंह ने अपनी नौ पासवानों के लिए एक जैसे नौ महलों का निर्माण करवाया था।

तारागढ़ (अजमेर)

अजमेर जिला मुख्यालय पर स्थित अरावली की पहाड़ियों पर तारागढ़ दुर्ग अब खण्डित दशा में है। इसे 'गढ़ बीठली' तथा 'अजयमेरु' भी कहते हैं। शाहजहाँ के शासनकाल में विट्ठलदास गौड़ यहाँ का दुर्गाध्यक्ष था और संभव है कि उस पराक्रमी योद्धा के नाम पर ही इस किले का नाम गढ़बीठली पड़ा हो। कर्नल टॉड के अनुसार इस दुर्ग का निर्माण चौहान शासक अजयपाल ने करवाया। तारागढ़ की प्राचीर में 14 विशाल बुर्जे हैं जिनमें घूंघट, गूगड़ी तथा फूटी बुर्ज, बाँदरा बुर्ज, इमली बुर्ज, खिड़की बुर्ज और फतेह बुर्ज प्रमुख हैं। तारागढ़ दुर्ग को सन् 1832 में भारत के गवर्नर जनरल विलियम बैंटिक ने देखा तो उनके मुँह से निकल पड़ा– ''ओह दुनिया का दूसरा जिब्राल्टर।''

मेहरानगढ़ (जोधपुर)

1459 ई. में राव जोधा द्वारा इस दुर्ग की स्थापना की गई। मेहरानगढ़ जोधपुर नगर की उत्तरी पहाड़ी चिड़ियाटूंक पर बना हुआ है। यह गिरि दुर्ग की श्रेणी में आता है। इसे मयूरध्वजगढ़, गढ़चिंतामणी भी कहा जाता है। लाल बलुआ पत्थर से निर्मित मेहरानगढ़ के महल राजपूत स्थापत्य कला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। अपनी विशालता के कारण सम्भवतः यह किला मेहरानगढ़ कहलाया – 'गढ़ बण्यो मेहराण'।

मेहरानगढ़ (जोधपुर)

दुर्ग के भीतर मोती महल, फतह महल, फूल महल, सिंगार महल दर्शनीय हैं। महाराजा मानसिंह द्वारा स्थापित 'पुस्तक प्रकाश' नामक पुस्तकालय वर्तमान में भी कार्यरत है। किले में लम्बी दूरी तक मार करने वाली अनेक प्राचीन तोपें हैं, जैसे– किलकिला, शंभुबाण, गजनीखान, जमजमा, कड़क बिजली, नुसरत, गुब्बार, धूड़घाणीद, बिच्छू बाण, मीर बख्श, रहस्य कला तथा गजक। दुर्ग परिसर में चामुण्डा माता, मुरली मनोहर व आनंदघन के प्राचीन मंदिर स्थित हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पर तखत विलास, चोखेलाव महल, बिचला महल, सिणगार चौकी (शृंगार चौकी) जैसी शानदार इमारतें भी दुर्ग की शोभा बढ़ाती हैं।

चूरू का किला

चूरू दुर्ग का निर्माण ठाकुर कुशाल सिंह ने 1739 ई. में करवाया था। 1857 ई. के विद्रोह में यहाँ के ठाकुर शिवसिंह ने अंग्रेजों का विरोध किया। इस पर अंग्रेजों ने बीकानेर राज्य की सेना लेकर चूरू दुर्ग को चारों ओर से घेर कर तोपों से गोलों की बरसात कर दी। जवाब में दुर्ग से भी गोले बरसाये गये। कुछ समय बाद गोले बनाने के लिये शीशा समाप्त हो गया। इस पर सेठ–साहूकारों और जनसामान्य ने अपने घरों से चाँदी लाकर ठाकुर के सामने रख दी। जब तोपों से छूटे चाँदी के गोले शत्रु सेना पर जाकर गिरे तो शत्रु सेना हैरान रह गयी और उसने जनता की भावनाओं का सम्मान करते हुए दुर्ग पर से घेरा उठा लिया।

अकबर का दुर्ग (अजमेर)

अकबर ने अजमेर नगर के मध्य में 1570 ई. में गुजरात विजय की स्मृति में एक दुर्ग का निर्माण करवाया। इस दुर्ग को 'अकबर का दौलतखाना' और 'अकबर की मैगजीन' भी कहते हैं। यह राजस्थान का एकमात्र दुर्ग है जो मुस्लिम दुर्ग स्थापत्य पद्धति से बनवाया गया है। 1576 ई. में महाराणा प्रताप के विरुद्ध हल्दीघाटी युद्ध की योजना को अन्तिम रूप इसी दुर्ग में दिया गया। ब्रिटिश राजदूत सर टामस रो जब भारत आया तो मुगल सम्राट जहाँगीर को अपना परिचय पत्र इसी दुर्ग में दिया। 1801 ई. में अंग्रेजों ने इस किले पर अधिकार कर इसे अपना शस्त्रागार (मैगजीन) बना लिया।

लालगढ़ दुर्ग (बीकानेर)

इसे 'जूनागढ़' भी कहते हैं। इस दुर्ग की नींव महाराजा रायसिंह ने 1589 ई. में रखी थी। दुर्ग की प्राचीर एवं अधिकतर निर्माण कार्य लाल पत्थरों से हुआ है इसलिए इसे लालगढ़ भी कहा जाता है। दुर्ग में आंतरिक द्वार सूरजपोल दरवाजे पर इस दुर्ग के संस्थापक राजा रायसिंह की प्रशस्ति उत्कीर्ण है। सूरजपोल के दोनों तरफ चित्तौड़ के साके में वीरगति पाने वाले दो इतिहास प्रसिद्ध वीरों जयमल मेड़तिया और फत्ता सिसोदिया की हाथी पर सवार मूर्तियाँ स्थापित हैं। रतन निवास, रंग महल, कर्ण महल, अनूप महल, छत्र निवास, लाल निवास, सरदार निवास, चीनी बुर्ज, सुनहरी बुर्ज, विक्रम विलास आदि इस दुर्ग में स्थित प्रमुख निर्माण है।

भैंसरोड़गढ़ का किला (चित्तौड़गढ़)

चम्बल और बामनी नदियों के संगम स्थल पर स्थित यह किला तीन ओर से पानी से घिरा हुआ है। यह 'जलदुर्ग' की श्रेणी में आता है। कर्नल टॉड के अनुसार इस किले का निर्माण भैंसाशाह नामक व्यापारी तथा रोड़ा चारण ने पर्वतीय लुटेरों से अपने व्यापारिक काफिले की रक्षा हेतु करवाया था। डोड शाखा के परमारों, राठौड़ों, शक्तावतों और चूण्डावतों के अधिकार में रहने के बाद भैंसरोड़गढ़ हाड़ाओं को मिला, पर अधिकांशतः यह मेवाड़ के अधिकार में ही रहा। इसे राजस्थान का वेल्लोर कहा जाता है।

गागरोण का किला (झालावाड़)

कालीसिंध व आहू नदी के संगम स्थल पर स्थित यह किला 'जलदुर्ग' की श्रेणी में आता है। इसका निर्माण 11वीं शताब्दी में डोड परमारों द्वारा करवाया गया था। उनके नाम पर यह डोडगढ़ या धूलरगढ़

कहलाया। तत्पश्चात् यह दुर्ग खींची चौहानों के अधिकार में आ गया। यह किला अचलदास खींची की वीरता की याद दिलाता है, जो 1423 में मांडू के सुल्तान हुशंगशाह से लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। संत पीपा की छतरी, सूफी संत मिट्ठे साहब (संत हमीदुद्दीन चिश्ती) की दरगाह तथा औरंगजेब द्वारा निर्मित बुलंद दरवाजा इस किले की शोभा बढ़ाते हैं।

गागरोण का किला (झालावाड़)

जयगढ़ (आमेर)

मध्यकालीन भारत की प्रमुख सैनिक इमारतों में से एक जयगढ़ दुर्ग की खास बात यह कि इसमें तोपें ढालने का विशाल कारखाना था, जो शायद ही किसी अन्य भारतीय दुर्ग में रहा है। इस किले में रखी 'जयबाण' तोप एशिया की सबसे बड़ी तोप है। जयगढ़ अपने विशाल पानी के टांकों के लिए भी जाना जाता है। इस किले के निर्माण एवं विस्तार में विभिन्न कछवाहा शासकों का योगदान रहा है, परन्तु इसे वर्तमान स्वरूप सवाई जयसिंह ने प्रदान किया। जयगढ़ को रहस्यमय दुर्ग भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें कई गुप्त सुरंगे हैं।

जालोर का किला

सोनगिरि पहाड़ी पर स्थित यह किला सूकड़ी नदी के किनारे बना हुआ है। शिलालेखों में जालोर का नाम जाबालिपुर और किले का नाम सुवर्णगिरि मिलता है। इस किले का निर्माण प्रतिहार शासकों द्वारा आठवीं सदी में करवाया गया था। किले के भीतर बनी तोपखाना मस्जिद, जो पूर्व में परमार शासक भोज द्वारा निर्मित संस्कृत पाठशाला थी, बहुत आकर्षक है। यहाँ का प्रसिद्ध शासक कान्हड़दे चौहान (1305–1311 ई.) था, जो अलाउद्दीन खिलजी से लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ।

जैसलमेर का किला

राजस्थान की स्वर्णनगरी कहे जाने वाले जैसलमेर में त्रिकूट पहाड़ी पर पीले पत्थरों से निर्मित इस किले को 'सोनार का किला' भी कहा जाता है। इसका निर्माण 1155 ई. में भाटी शासक राव जैसल ने करवाया था। इस दुर्ग के चारों ओर विशाल मरूस्थल फैला हुआ है। इसके बारे में यह कहावत प्रचलित है कि यहाँ पत्थर के पैर, लोहे का शरीर और काठ के घोड़े पर सवार होकर ही पहुँचा जा सकता है।

दूर से देखने पर यह किला पहाड़ी पर लंगर डाले एक जहाज जैसा प्रतीत होता। इस किले को कारीगरों ने चूने के स्थान पर बड़े–बड़े पीले पत्थरों को परस्पर जोड़कर खड़ा किया है। किले के अंदर बने प्राचीन एवं भव्य जैन मंदिर – पार्श्वनाथ और ऋषभदेव मंदिर – अपने शिल्प एवं सौन्दर्य के कारण आबू के देलवाड़ा जैन मंदिरों की बराबरी करते हैं। किले के महलों में रंगमहल, मोती महल, गजविलास और

जवाहर विलास प्रमुख हैं। इस किले की प्रसिद्धि इसके दुर्लभ और प्राचीन पाण्डुलिपियों के संग्रहालय के कारण भी है।

लोहागढ़

भरतपुर के जाट राजाओं की वीरता एवं शौर्य गाथाओं को अपने में समेटे लोहागढ़ का किला अजेयता एवं सुदृढ़ता के लिए विख्यात है। यह 1733 ई. में जाट शासक महाराजा सूरजमल द्वारा बनवाया गया। लोहागढ़ को पूर्वस्थित में कच्ची गढ़ी को विकसित कर वर्तमान रूप दिया गया। किले के प्रवेशद्वार पर अष्टधातु से निर्मित कलात्मक और मजबूत दरवाजा आज भी वीरता की कहानी कहता है। इस दरवाजे को महाराजा जवाहरसिंह 1765 में दिल्ली से विजय करके लाये थे। इस किले की अभेद्यता का कारण इसकी चौड़ी दीवारें है। किले की बाहरी दीवारें मिट्टी की बनी है तथा इसके चारों ओर एक गहरी खाई है। इस खाई में मोती झील से सुजान गंगा नहर का पानी भरा जाता था। अंग्रेज जनरल लॉर्ड लेक ने 1805 ई. में अपनी विशाल सेना और तोपखाने के साथ पाँच बार इस किले पर चढ़ाई की परन्तु हर बार वह असफल रहा। किले में किशोरी महल, जवाहर बुर्ज, कोठी खास, वजीर की कोठी, दादी माँ का महल, गंगा मंदिर, लक्ष्मण मंदिर आदि प्रमुख है।

उपर्युक्त प्रमुख दुर्गों के अलावा बयाना का किला, तिमनगढ़ का दुर्ग, मारवाड़ का सोजत और कुचामन का किला, पूर्व जयपुर रियासत के शिवाड़, कालख, काकोड़ और खंडार के किले, हाड़ौती का शेरगढ़, सिरोही का बसंतगढ़ का दुर्ग तथा सीकर का लक्ष्मणगढ़ दुर्ग भी अपने स्थापत्य और बनावट के कारण उल्लेखनीय है।

मंदिर शिल्प

स्थापत्य कला न केवल नगर–निर्माण, भवन एवं दुर्ग–निर्माण तक ही सीमित रही वरन् कला की गति और कला की शक्ति के अनुरूप उसका प्रवेश मंदिरों के निर्माण द्वारा भी प्रदर्शित हुआ। भारत में मानसिक तथा राजनीतिक परिवर्तन के साथ कला की प्रगति भी होती रही।

यदि राजस्थान के संदर्भ में चर्चा करें तो, राजस्थान में सातवीं सदी से पूर्व जो मंदिर बने, दुर्भाग्य से उनके अवशेष ही प्राप्त होते हैं, जैसे– बैराठ का मौर्ययुगीन गोल बौद्ध मंदिर, नगरी (चित्तौड़गढ़) का वैष्णव मंदिर। यहाँ मंदिरों के विकास का काल सातवीं से दसवीं सदी के मध्य रहा। लगभग आठवीं सदी से राजस्थान में जिस क्षेत्रीय शैली का विकास हुआ, उसे गुर्जर–प्रतिहार अथवा महामारू कहा गया है। इस शैली के अंतर्गत प्रारंभिक निर्माण मण्डोर के प्रतिहारों, सांभर के चौहानों तथा चित्तौड़ के मौर्यों ने किया।

प्रारंभिक दौर (लगभग 8वीं सदी एवं 9वीं सदी का प्रारंभ) के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मंदिर ओसियां, चित्तौड़गढ़ एवं आभानेरी में स्थित हैं। ओसियां में 8वीं से 12वीं सदी तक जो मंदिर बने उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण पहाड़ी पर सच्चियाय माता के मंदिर के पास बना सूर्य मंदिर और नीचे मैदान में बने हरिहर मंदिर व महावीर मंदिर हैं।

9वीं सदी में विकसित गुर्जर प्रतिहार शैली के महत्त्वपूर्ण मंदिर पाली जिले में आऊवा व बालोतरा के पास खेड (दोनों लगभग 850 ई.) के क्रमशः कामेश्वर एवं रणछोड़ जी मंदिर हैं। लगभग 10वीं व 11वीं सदी के प्रारंभ में हमें गुर्जर प्रतिहार शैली का पूर्ण विकास व सोलंकी शैली का प्रारंभ देखने को मिलता हैं। इस समय का पहला महत्त्वपूर्ण मंदिर मेड़ता के दक्षिण में कैकीन्द या जसनगर का नीलकण्ठेश्वर मंदिर है। सीकर के पास हर्षनाथ का मंदिर भी इसी समय का है। सरिस्का के दक्षिण पश्चिम में पारानगर का नीलकण्ठेश्वर मंदिर भी एक भव्य त्रिकूटाकार मंदिर हैं। इन दोनों मंदिरों में हमें गोल स्तंभ मिलते है जो आने वाले समय में आम हो गए थे। गुर्जर प्रतिहार शैली का अंतिम व सबसे भव्य मंदिर किराडू का सोमेश्वर मंदिर (लगभग 1016 ई.) है। यह भारत के सबसे अच्छे मंदिरों में से एक है। इसका शिखर दर्शनीय है।

इस क्रम को आगे बढ़ाने वालों में जालोर के गुर्जर प्रतिहार रहे और उनके पश्चात् चौहानों, परमारों और गुहिलों ने मंदिर शिल्प को समृद्ध बनाया। परन्तु इस काल के कुछ मंदिर गुर्जर–प्रतिहार शैली से अलग भी हैं, इनमें बाड़ौली का मंदिर, नागदा में सास–बहू का मंदिर और उदयपुर में जगत अम्बिका मंदिर प्रमुख हैं।

11वीं से 13वीं सदी के बीच बने राजस्थान के मंदिर सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि यह मंदिर–शिल्प का स्वर्ण काल था। इस काल में राजस्थान में काफी संख्या में विशाल और अलंकृत मंदिर बने, जिन्हें सोलंकी या मारु गुर्जर शैली के अंतर्गत रखा जा सकता है। इस शैली के मंदिरों में ओसियां का सच्चिया माता मंदिर, चित्तौड़ दुर्ग में स्थित समिधेश्वर मंदिर आदि प्रमुख हैं। इस शैली के मंदिरों में खंभे अलंकृत, पतले, लम्बे और गोलाई लिये हुये हैं। ये मंदिर ऊँची पीठिका पर निर्मित हैं।

इस समय ही एक और शैली विकसित हुई–भूमिज। राजस्थान में इस शैली का सबसे पुराना (लगभग 1010–20 ई.) मंदिर पाली जिले में सेवाड़ी का जैन मंदिर है। मैनाल का महानालेश्वर (लगभग 1075 ई.), बारां जिले में रामगढ़ का भण्डदेवरा व बिजोलिया का उंडेश्वर मंदिर इस शैली के अन्य उदाहरण है।

राजस्थान सहित संपूर्ण भारत में 13वीं सदी के बाद का काल मंदिर निर्माण की दृष्टि से बहुत उल्लेखनीय नहीं था। उत्तर भारत में हिमालय पर्वत की निचली श्रृंखलाओं के अलावा शायद राजस्थान ऐसा एकमात्र क्षेत्र था जहाँ बड़े मंदिरों का निर्माण जारी रहा। इसका श्रेय तत्कालीन राजपूत शासकों को हैं। इस काल के मंदिरों में उदयपुर के जगदीशजी, एकलिंगजी के मुख्य मंदिर, केशोरायपाटन के मंदिर और आमेर के जगत शिरोमणि प्रमुख मंदिर है। ये मंदिर आकार की भव्यता लिए रहे हैं। विशाल एवं कलात्मक मंदिरों को बनाने में समय और धन विपुलता से व्यय होता था। बाद में धार्मिक असहिष्णुता के कारण मंदिरों को नष्ट–भ्रष्ट किए जाने के कारण प्रायः इनका निर्माण बंद हो गया। ऐसे मंदिरों के बजाय 16वीं–17वीं सदी के बाद हवेली शैली के मंदिरों के निर्माण की बहुलता रही।

राजस्थान में अनेक जैन मंदिर बने, जो वास्तुकला की दृष्टि से अपना अलग स्थान रखते है। इन मंदिरों में विशिष्ट तल विन्यास, संयोजन और स्वरूप का विकास हुआ जो इस धर्म की पूजा–पद्धति और मान्यताओं के अनुरूप था। जैन मंदिरों में सर्वाधिक प्रसिद्ध देलवाड़ा के मंदिर हैं। इनके अलावा रणकपुर, ओसियां, जैसलमेर आदि स्थानों के जैन मंदिर प्रसिद्ध हैं। पाली जिले में सेवाड़ी, घाणेराव, नाडौल–नारलाई, सिरोही जिले में वर्माण, झालावाड़ जिले में चाँदखेड़ी और झालरापाटन, बूंदी में केशोरायपाटन, करौली में श्रीमहावीर जी आदि जगहों के जैन मंदिर भी प्रसिद्ध है।

एकलिंगजी का मंदिर, उदयपुर

एकलिंगजी का लकुलीश मंदिर उदयपुर शहर के निकट नाथद्वारा राजमार्ग पर कैलाशपुरी नामक गाँव में स्थित है। इसका निर्माण आठवीं सदी में मेवाड़ के गुहिल शासक बप्पा रावल ने करवाया था तथा इसे वर्तमान स्वरूप महाराणा रायमल ने प्रदान किया। मंदिर के मुख्य भाग में काले पत्थर से बनी एकलिंगजी की चतुर्मुखी प्रतिमा है। एकलिंगजी को मेवाड़ राजघराने का कुलदेवता माना जाता था, जबकि मेवाड़ का शासक स्वयं को इनका दीवान मानते थे। इस मंदिर के अहाते में कुंभा द्वारा निर्मित विष्णु मंदिर भी है।

किराडू के मंदिर, बाड़मेर

किराडू का प्राचीन नाम 'किराट कूप' था जो बाड़मेर के हाथमा गाँव के समीप के खदीन रेलवे स्टेशन से पांच कि.मी. दूर एक पहाड़ी पर स्थित है। 11वीं–12वीं सदी में बने यहाँ के मंदिर ओसियां के मंदिरों के बाद के समय के हैं। यहाँ पर पाँच मंदिरों का समूह है, जिनमें वैष्णव व शैव मंदिर हैं।

किराडू के मंदिर, बाड़मेर

किराडू के मंदिरों में से सबसे सुन्दर 'सोमेश्वर मंदिर' है। यह मंदिर उच्च कोटि की तक्षण कला के साथ–साथ गुप्तकालीन व क्षेत्रीय परमार और सोलंकी शैली का अद्भुत मिश्रण प्रस्तुत करता है। किराडू को 'राजस्थान का खजुराहो' भी कहा जाता है।

जगतशिरोमणि मंदिर, आमेर

आमेर स्थित इस मंदिर का निर्माण कछवाहा शासक मानसिंह की पत्नी कंकावती ने अपने पुत्र जगतसिंह की याद में करवाया था। मान्यता है कि इस मंदिर में प्रतिष्ठित काले पत्थर की कृष्ण की वही मूर्ति है, जिसकी मीरा चित्तौड़ में आराधना किया करती थी। मानसिंह इसे चित्तौड़ से लेकर आये थे।

जैन मंदिर, देलवाड़ा

उत्तर–मध्यकालीन मंदिर शिल्पकला का चरमोत्कर्ष आबू पर्वत स्थित देलवाड़ा के जैन मंदिरों में देखा जा सकता है। यह राजस्थान–गुजरात की सोलंकी (चालुक्य) शिल्पकला शैली के प्रमुख नमूने कहे जा सकते हैं।

यहाँ स्थित जैन मंदिरों में दो मंदिर प्रमुख हैं। पहला मंदिर प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव का है। इसे 1031 ई. में गुजरात के चालुक्य शासक भीमदेव के मंत्री विमलशाह ने बनवाया था। इस मंदिर को विमलवसाही के नाम से भी जाना जाता है। दूसरा प्रमुख मंदिर 22वें जैन तीर्थंकर नेमिनाथ का है, जिसका निर्माण वास्तुपाल और तेजपाल द्वारा 1230 ई. में करवाया गया था। इस मंदिर को लूणवसाही के नाम से भी जाना जाता है। इस मंदिर के मंडप, स्तम्भों, छतरियों तथा वेदियों के निर्माण में श्वेत पत्थर पर बारीकी से खुदाई की गई है। इस मंदिर के रंग–मण्डप व नवचौकी की कलात्मकता अद्भुत है।

जैन मंदिर, देलवाड़ा

हर्षतमाता मंदिर, आभानेरी

आभानेरी नामक स्थान पर स्थित 'हर्षतमाता' का मंदिर गुर्जर–प्रतिहारकालीन कला का उत्कृष्ट उदाहरण है। 11वीं शताब्दी में इस प्रदेश को महमूद गजनवी ने नष्ट–भ्रष्ट कर दिया तथा मंदिर भी पूर्णतया क्षतिग्रस्त हो गया। मूलतः यह मंदिर एक विष्णु मंदिर था।

शिव मंदिर, बाड़ौली

चित्तौड़गढ़ जिले में स्थित बाड़ौली शिव मंदिर पंचायतन शैली का मंदिर है। इसमें मुख्य मूर्तियाँ शिव–पार्वती और उनके सेवकों की हैं। ऐसी मान्यता है कि इस मंदिर का निर्माण हूण शासक तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल ने करवाया था।

शिव मंदिर, भण्डदेवरा

बारां जिले के रामगढ़ में स्थित भण्डदेवरा का शिव मंदिर 'हाड़ौती का खजुराहो' के रूप में प्रसिद्ध है। इसका निर्माण मेदवंशीय राजा मलय वर्मा ने 10वीं सदी में करवाया था। यह मंदिर पंचायतन शैली में बना हुआ है।

जैन मंदिर, रणकपुर

पाली जिले में स्थित रणकपुर का जैन मंदिर अपनी अद्भुत शिल्पकला एवं भव्यता के लिए विख्यात है। प्रथम जैन तीर्थंकर आदिनाथ को समर्पित इस मंदिर का निर्माण महाराणा कुंभा के शासनकाल

(1433–1468 ई.) में धरणीशाह नामक एक जैन व्यापारी ने करवाया था। यह मंदिर 1444 खंभों पर टिका होने के कारण 'खंभों का अजायबघर' भी कहा जाता है। मूल गर्भगृह में आदिनाथ की चार मुख वाली मूर्ति प्रतिष्ठापित है। इसलिए यह मंदिर 'चौमुखा मंदिर' भी कहलाता है।

सच्चिया माता मंदिर, ओसियां

जोधपुर से 57 किमी. की दूरी पर दक्षिण–पश्चिम दिशा में ओसियां स्थित है। यहाँ 8वीं सदी के बने वैष्णव व जैन मंदिर समूह गुर्जर–प्रतिहार कला के प्रमुख केन्द्र थे। यहाँ पारम्परिक तरीके से वैष्णव, शैव व जैन मंदिरों का निर्माण हुआ है। ओसियां के वैष्णव मंदिरों में हरिहर मंदिर व सूर्य मंदिर प्रमुख हैं। जैन मंदिरों में महावीर का मंदिर तथा शाक्त मंदिरों में पीपला माता तथा सच्चिया माता के मंदिर प्रमुख है।

सास–बहू मंदिर, नागदा

उदयपुर से 27 किमी. दूर नागदा में 1026 ई. में गुहिल शासक श्रीधर द्वारा कुछ मंदिरों का निर्माण कराया गया। इनमें से दो जुड़वा वैष्णव मंदिर 'सास–बहू' मंदिर के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये दोनों ही मंदिर आकार में छोटे–बड़े होने के बावजूद भी अलंकरण की दृष्टि से समान ही है।

राजप्रासाद एवं महल स्थापत्य

स्थापत्य का एक विशिष्ट रूप राजप्रासाद है। राजस्थान में राजपूतों के राज्य स्थापित होने के साथ राजभवनों का भी निर्माण होने लगा। मेनाल, नागदा, आमेर आदि स्थानों में पूर्व मध्य काल के राजभवनों के अवशेष मिलते हैं, जिनमें छोटे–छोटे कमरे, छोटे–छोटे दरवाजे, खिड़कियों का अभाव एवं दो किनारों के कमरों को बरामदे से जोड़ा जाना इनकी विशेषता है।

मध्यकाल में आर्थिक समृद्धि के कारण राजप्रासाद विशाल, भव्य एवं सुसज्जित बनने लगे। कुम्भाकालीन राजप्रासाद सादे थे किन्तु बाद के काल में महलों की बनावट एवं शिल्प में परिवर्तन दिखाई देता है। 15वीं सदी के बाद जब राजपूत शासकों का मुगलों के साथ सम्पर्क हुआ, तो उसका असर यहाँ के महलों के स्थापत्य पर भी दिखाई दिया। फव्वारे, छोटे बाग–बगीचे, बेल–बूँटे, संगमरमर का प्रयोग, मेहराब, गुम्बज आदि रूपों में मुगल प्रभाव इन इमारतों पर दिखाई देता है। जैसे– उदयपुर के महलों में अमरसिंह के महल, कर्णसिंह का जगमंदिर, जगतसिंह द्वितीय के काल का प्रीतम निवास महल, जगनिवास महल, आमेर के दीवाने आम, दीवाने खास, बीकानेर के कर्णमहल, शीशमहल, अनूप महल, रंगमहल, जोधपुर के फूल महल आदि।

सत्रहवीं सदी के पश्चात् कोटा, बूंदी, जयपुर आदि में महलों में स्पष्टतः मुगल प्रभाव दिखाई देता है। मुगल प्रभाव के कारण राजप्रासादों में दीवाने आम, दीवाने खास, चित्रशालाएं, बारहदरियां, गवाक्ष–झरोखे, रंग महल आदि को जगह मिलने लगी। इस प्रकार के महलों में जयपुर का सिटी पैलेस तथा उदयपुर का सिटी पैलेस मुख्य है। राजस्थान के महलों में डीग के महल, जिन्हें जलमहल भी कहते हैं, का विशेष स्थान है। ये महल जाट राजा सूरजमल द्वारा निर्मित है। डीग के महलों के चारों ओर छज्जे (कार्निस) हैं, जो अलग ही प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

हवेली स्थापत्य

राजस्थान के नगरों में सामंत और सेठों ने भव्य हवेलियां बनवाई। जयपुर की हवेली परम्परा इतनी प्रसिद्ध हुई कि बाद में शेखावाटी के धनिकों ने अपने–अपने गाँव में विशाल हवेलियां बनवाने की परम्परा की नींव डाल दी। रामगढ़, नवलगढ़, फतेहपुर, मुकुन्दगढ़, मण्डावा, पिलानी, सरदार शहर, रतनगढ़, लक्ष्मणगढ़ आदि कस्बों में विशाल हवेलियां बनना प्रारम्भ हो गई।

जैसलमेर की सालमसिंह की हवेली, नथमल की हवेली तथा पटवों की हवेली तो पत्थर की जाली एवं कटाई के कारण आज दुनिया भर में प्रसिद्ध हो गयी हैं। इसी प्रकार वंशी पत्थर की बनी करौली, भरतपुर,

कोटा की हवेलियां भी अपनी कलात्मक संगतराशी के कारण अद्‌भुत हैं। बाद के वैष्णव मंदिर भी हवेली शैली के आधार पर ही बने, इसलिए विशाल हवेलियां मंदिरों के रूप में आज जगह–जगह दिखाई देती है।

बीकानेर की प्रसिद्ध 'बच्छावतों की हवेली' सोलहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कर्णसिंह बच्छावत द्वारा बनवाई गयी। इसके अलावा बीकानेर में मोहता, मूंदड़ा, रामपुरिया आदि की हवेलियां अपने शिल्प वैभव के कारण विख्यात है। बीकानेर की हवेलियां लाल पत्थर से बनी है। इनकी सजावट में मुगल, किशनगढ़ एवं यूरोपीय चित्रशैली प्रयुक्त की गई है।

मण्डावा हवेली

शेखावाटी की हवेलियां अपने भित्तिचित्रों के लिए प्रसिद्ध हैं। नवलगढ़ की हवेलियों में रूप निवास, भगत, जालान, पोद्‌दार और भगेरियां की हवेलियां प्रसिद्ध हैं। बिसाऊ (झुंझुनूं) में नाथूराम पोद्‌दार की हवेली, सेठ जयदयाल केठिया की तथा सीताराम सिंगतिया की हवेली विख्यात है। डूंडलोद (झुंझुनूं) में सेठ लालचन्द गोयनका, मुकुन्दगढ़ (झुंझुनूं) में सेठ राधाकृष्ण एवं केसरदेव कानेड़िया की हवेलियां, चिड़ावा (झुंझुनूं) में बगड़ियां की हवेली, महनसर (झुंझुनूं) की सोने–चांदी की हवेली, श्रीमाधोपुर (सीकर) में पंसारी की हवेली सुप्रसिद्ध है। लक्ष्मणगढ़ (सीकर) की चार चौक की हवेली व चेतराम की हवेली भी दर्शनीय है।

सीकर में गौरीलाल बियाणी की हवेली, रामगढ़ (सीकर) में ताराचन्द रूइया की हवेली, फतेहपुर (सीकर) में नन्दलाल देवड़ा की हवेलियां भी समकालीन भित्तिचित्रों के कारण प्रसिद्ध है। चूरू की हवेलियों में मालजी का कमरा, रामनिवास गोयनका की हवेली, मंत्रियों की हवेली इत्यादि विख्यात है।

जोधपुर में बड़े मियां की हवेली, पोकरण की हवेली, राखी हवेली, टोंक की सुनहरी कोठी, उदयपुर में बागौर की हवेली, जयपुर में नाटाणियों की हवेली, रत्नाकार पुण्डरीक की हवेली, पुरोहित प्रतापनारायण जी की हवेली इत्यादि में हवेली स्थापत्य के विभिन्न रूप दिखाई देते हैं।

छतरियाँ, मकबरे और दरगाह

मृत्यु के बाद स्मृति–चिह्न बनाने की परम्परा बहुत पुरानी है। राजस्थान के शासक तथा श्रेष्ठि–वर्ग सम्पन्न था, अतः उनकी मृत्यु के बाद उनकी याद में स्थापत्य की दृष्टि से विशिष्ट स्मारक बनाए गये, जिन्हें छतरियों और देवल के नाम से जाना जाता है। स्थापत्य कला एवं भवन निर्माण की दृष्टि से ये स्मारक बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। जयपुर का गैटोर, जोधपुर का जसवंत थड़ा, कोटा का छत्रविलास बाग, जैसलमेर का बड़ा बाग तो इस दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है।

छतरियाँ मुगल और राजपूत कला का सुन्दर समन्वय प्रदर्शित करती हैं। अलवर में मूसी महारानी की छतरी, फतह गुम्बद, करौली में गोपालसिंह की छतरी, बूंदी में चौरासी खम्भों की छतरी, रामगढ़ में सेठों की छतरी, बीकानेर में राव कल्याणमल की छतरी, गैटोर में ईश्वरसिंह की छतरी, जोधपुर में जसवंत सिंह का थड़ा, जैसलमेर में राजाओं और पालीवालों की छतरियों का स्थापत्य विलक्षण है।

सूफी संत ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह (अजमेर) और हमीद्दीन नागौरी की दरगाह (नागौर) लोगों की आस्था का केंद्र होने के साथ–साथ स्थापत्य के बेजोड़ नमूने है। दीवानशाह की दरगाह (कपासन), मिट्ठेशाह की दरगाह (गागरोन), शक्कर पीर बाबा की दरगाह (नरहड़), अब्दुल पीर की मजार (भवानपुरा), मीरा साहब की दरगाह (बूंदी), ख्वाजा फखरुद्दीन की दरगाह (सरवाड़), अब्दुल्ला खाँ का मकबरा (अजमेर) आदि हिन्दू–मुस्लिम स्थापत्य कला के समन्वय के प्रतीक है।

जल स्थापत्य

राजस्थान का एक बड़ा हिस्सा रेतीला है। इसके बावजूद भी यहाँ जल स्थापत्य का विकास हुआ। कुँए, कुंड, बावडियां, टांके यहाँ के जल स्थापत्य की पहचान है। कुआं राजस्थान में उपयोगी जलस्रोत है। बांदीकुई का नाम किसी बांदी अर्थात् दासी द्वारा बनवाये कुएं के नाम पर रखा गया है। बाटाडू गाँव (बाड़मेर) में आधुनिक पाषाण कला से बना संगमरमर का कुआँ दर्शनीय है।

टांके जल स्थापत्य के महत्वपूर्ण उदाहरण है। इनमें बरसाती पानी एकत्रित किया जाता है। टांकों के अच्छे नमूने किलों में मिलते हैं, जिनमें जयपुर का जयगढ़ किला प्रमुख है। ये टांके मध्यकालीन सिविल इंजिनियरिंग के उत्तम प्रमाण हैं।

राजस्थान के जन–जीवन में बावड़ियां बहुत महत्वपूर्ण है। इनके निर्माण में उपयोगिता के साथ ही सौन्दर्य का भी विशेष ध्यान रखा जाता था। ये राजपरिवार के सदस्यों मुख्यतः रानियां, राजमाताएं, श्रेष्ठी वर्ग इत्यादि द्वारा बनवायी जाती थी। इनके निर्माण से संबंधित सूचनाएं भी शिलालेखों पर अंकित की जाती थी, जिनसे निर्माताओं और कारीगरों की जानकारी प्राप्त होती है।

बांदीकुई के निकट बनी आभानेरी की चांद बावड़ी संभवतया राज्य की सबसे कलात्मक बावड़ी है। मान्यता है कि किसी चांद नामक राजा ने इसे बनवाया था। मेवाड़ महाराणा राजसिंह की पत्नी रानी रामरसदे ने उदयपुर में त्रिमुखी बावड़ी का निर्माण करवाया। डूंगरपुर के निकट स्थित प्रसिद्ध नौलखा बावड़ी महारावल आसकरण की पत्नी प्रीमल देवी ने बनवायी थी। बूंदी में स्थित रानीजी की बावड़ी का निर्माण बूंदी के शासक अनिरुद्ध सिंह की पत्नी नाथावत ने 1699 ई. में करवाया था।

राजस्थान के दक्षिण–पश्चिमी भागों में बड़े–बड़े तालाब भी रहे हैं जो अपने प्रकार के स्थापत्य पर रोशनी डालते हैं। चूंकि ये भाग अधिकांश पहाड़ी हैं, अतः वहाँ दो पहाड़ों के बीच के स्थान को रोककर धूल और पत्थरों का बांध बना दिया जाता था। बांध को आगे से सीढ़ियों से तालाब तक जोड़ दिया जाता था। बांध पक्का बनाया जाता था। इसके नीचे कुछ वृक्षों की पंक्तियां लगा दी जाती थीं और उन्हें पक्के बांध से जोड़ दिया जाता था। इस प्रकार के बांधों में पिछौला (उदयपुर), गेबसागर (डूंगरपुर), राजसमंद (राजनगर) और जयसमंद (ढेबर) बड़े प्रसिद्ध हैं। इनके निर्माण में यही पद्धति 11वीं सदी से 17वीं सदी तक काम ली गयी है। इन बांधों में राजसमंद का बांध विशिष्ट है। इसे दुष्काल से पीड़ित जनता को राहत देने के लिए बनाया गया था। इस बांध पर नौचौकी नामक तीन–तीन भाग वाली तीन छत्रियां बनायी गयी हैं जो तक्षण–कला की दृष्टि से अनुपम हैं।

अभ्यास प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न –

1. किस दुर्ग के लिए कहा गया है कि "यह दुर्ग बख्तरबंद है।"

    (अ) रणथम्भौर　　(ब) नाहरगढ़

    (स) सिवाणा　　(द) तारागढ़

2. एक जैसे नौ महल किस किले में बने हुए हैं?

    (अ) नाहरगढ़　　(ब) तारागढ़

    (स) चित्तौड़गढ़　　(द) गागरोण

3. अकबर का दुर्ग कहाँ स्थित है?

    (अ) अजमेर　　(ब) जयपुर

    (स) बीकानेर　　(द) चित्तौड़गढ़

4. हर्षतमाता मंदिर कहाँ पर स्थित है–

    (अ) आभानेरी　　(ब) पुष्कर

    (स) सालासर　　(द) माउंटआबू

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान के उन दुर्गों का नामोल्लेख कीजिए जिन्हें 'वर्ल्ड हेरिटेज साइट' की सूची में शामिल किया गया है।
2. चित्तौड़गढ़ का दुर्ग किस पठार पर स्थित है?
3. कुंभलगढ़ दुर्ग का प्रमुख शिल्पी कौन था?
4. सुदर्शनगढ़ किस किले का दूसरा नाम है?
5. तारागढ़ नामक दुर्ग किन दो स्थानों पर स्थित है?
6. किस दुर्ग को 'राजस्थान का वेल्लोर' कहा जाता है?
7. सास–बहू मंदिर किस स्थान पर स्थित है?
8. 'बच्छावतों की हवेली' किस शहर में स्थित है?
9. सुमेलित कीजिए

छतरी	संबंधित स्थल
1. गोपाल सिंह की छतरी	जोधपुर
2. मूसी महारानी की छतरी	गैटोर
3. ईश्वरसिंह की छतरी	अलवर
4. जसवंत थड़ा	करौली

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान की किन्ही दो बावड़ियों का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।
2. राजस्थान में स्थित पांच प्रमुखों दरगाहों का उल्लेख कीजिये।
3. लोहागढ़ किले की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिये।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान के हवेली स्थापत्य पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखिए।
2. राजस्थान के मंदिर शिल्प की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. दुर्गों की विभिन्न श्रेणियों की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

परियोजनात्मक कार्य :

1. अपने आस–पास स्थित किसी मंदिर में जाकर उसकी प्रमुख विशेषताओं का एक चार्ट तैयार कीजिए।

कल्पना करें :

1. आपका एक विदेशी मित्र राजस्थान की प्रमुख हवेलियां देखना चाहता है, आप उसे कहाँ घूमाने ले जाएंगे?